प्रकाशित: 25 दिसंबर 2017 को नेशनलिस्ट ऑनलाइन डॉट कॉम में प्रकाशित

सनातन संस्कृति और राष्ट्रवादी चेतना की प्रतिमूर्ति थे पं. मदन मोहन मालवीय

अरविन्द जयतिलक

पंडित मदनमोहन मालवीय जी का संपूर्ण सामाजिक-राजनीतिक जीवन स्वदेश के खोए गौरव को स्थापित करने के लिए प्रयासरत रहा। जीवन-युद्ध में उतरने से पहले ही उन्होंने तय कर लिया था कि देश को आजाद कराना और सनातन संस्कृति की पुर्नस्थापना उनकी प्राथमिकता होगी। 1893 में कानून की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद वे इलाहाबाद उच्च न्यायालय में वकालत करने लगे। बतौर वकील उनकी सबसे बड़ी सफलता यह रही कि उन्होंने चौरी-चौरा कांड के 151 अभियुक्तों को, जिन्हें सत्र न्यायाधीश ने फांसी की सजा दी थी, उच्च न्यायालय में पैरवी करके बचा लिया। उनकी इस सफलता ने आजादी के दिवानों में इंकलाब ला दिया। उनका मकसद भी था कि देश के युवा आजादी की लड़ाई से जुड़े और भारतीय संस्कृति की पुर्नस्थापना के संवाहक बनें। इसी उद्देश्य से उन्होंने 4 फरवरी, 1916 को बसंत पंचमी के दिन काशी हिंदू विश्वविद्यालय (बीएचयू) की स्थापना की।

एक लोकश्रुति है कि पंडित मदन मोहन मालवीय जी ने काशी हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना का संकल्प इलाहाबाद के कुंभ मेले में देश भर से आए श्रद्धालुओं के बीच जब व्यक्त किया तो उस समय एक वृद्धा ने उन्हें चंदे के रुप में एक पैसा दिया। इसके उपरांत मालवीय जी ने विश्वविद्यालय के विकास के लिए चंदा इकठ्ठा करने के लिए देश भर की यात्रा की। कहा जाता है कि जब काशी नरेश गंगा से डुबकी लगाकर निकले तो सामने मालवीय जी खड़े थे। वे उनसे विश्वविद्यालय की स्थापना के लिए दान में जमीन मांग ली। कलकत्ता के दानवीरों ने उन्हें रथ पर बिठाया और घोड़ों की जगह खुद जुते। जब वे रामपुर के नवाब से विश्वविद्यालय के लिए धन मांगने गए तो उसने उनका तिरस्कार करते हुए अपनी जूती दान में दिया। लेकिन मालवीय जी इससे विचलित नहीं हुए। उन्होंने नवाब की जूती को उसका इज्जत बता नीलामी के लिए बाजार में बैठ गए। नवाब पानी-पानी हो गया। उसे मुंहमांगी बोली लगाकर मालवीय जी से जुतियां खरीदनी पड़ी। एक कहावत यह भी है कि उसी समय एक सेठ का निधन हुआ और मालवीय जी उसकी शव यात्रा में लुटाए जा रहे पैसों को बटोरना शुरु किया। जब लोगों ने उनसे पूछा कि आप क्या कर रहे हैं तब उन्होंने कहा कि 'निजाम का दान न सही, शव-विमान का ही सही।' जब यह बात निजाम के कानों तक गयी तो वह बहुत शर्मिंदा हुआ और मालवीय जी को ढ़ेर धनराशि दी। मालवीय जी को विश्वास था कि राष्ट्र की उन्नति तभी संभव है जब लोग सुशिक्षित होंगे। मालवीय जी ने संपूर्ण भारत में शिक्षा का प्रचार किया। उनका स्पष्ट मानना था कि व्यक्ति अपने कर्तव्यों और अधिकारों का समुचित पालन तभी कर सकता है जब वह शिक्षित होगा। मालवीय जी 1919 से 1939 तक काशी हिंदू विश्वविद्यालय के उपकुलपति रहे। उन्होंने विश्वविद्यालय की स्थापना का उद्देश्य प्रकट करते हुए एक दीक्षांत भाषण में कहा था कि 'इस विश्वविद्यालय की स्थापना इसलिए की गयी कि यहां के छात्र विद्या अर्जित करें, देश व धर्म के सच्चे सेवक

बनें, वीरता के साथ अन्याय का प्रतिकार करें।' आजादी की लड़ाई और उसके बाद इस विश्वविद्यालय ने देश की जो सेवा की, वह सर्वविदित है। मालवीय जी सनातन हिंदू थे। वे तिलक लगाते थे और संध्यापूजन करते थे। जब वे गोलमेज परिषद में गए तो अपने साथ गंगाजल ले गए।

1923 और 1936 में वे दो बार हिंदू महासभा के प्रधान चुने गए। उनका कहना था 'मैं चाहता हूं कि भारत के गांव-गांव में हिंदू सभाएं स्थापित हों और हिंदुओं के शक्तिशाली संगठन हों।' लेकिन उनका हिंदुत्व संकीर्ण परिधि में सीमित नहीं था। उन्होंने एक संस्था की स्थापना की थी जिसका काम उन अस्पृश्यों को हिंदू धर्म में दीक्षित करना था, जिन्हें ईसाई मिशनरियों ने ईसाई बना दिया था। मालवीय जी सनातन संस्कृति और भारतीय भाषा के पक्षधर थे। 1937-38 की एक घटना का खूब जिक्र होता है जब मालवीय जी को इलाहाबाद विश्वविद्यालय में दीक्षांत भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया था। विश्वविद्यालय के इतिहास में अभी तक दीक्षांत भाषण अंग्रेजी में ही दिए जाने की परंपरा रही। लेकिन मालवीय जी ने उस परंपरा को तोड़ हिंदी में भाषण देकर देशभक्ति का अनूठा उदाहरण पेश किया। 'सर, स्पीक इन इंगलिश, वी कांट फॉलो योर हिंदी' जैसे ही श्रोताओं के बीच से यह आवाज गूंजी तो पंडित मदन मोहन मालवीय जी का चेहरा तमतमा गया। उन्होंने तपाक से जवाब दिया 'महाशय, मुझे भी अंग्रेजी बोलना आता है। शायद हिंदी की अपेक्षा मैं अंग्रेजी में अपनी बात अधिक अच्छे ढंग से कह सकता हूं, लेकिन मैं एक पुरानी अस्वस्थ परंपरा को तोड़ना चाहता हूं।'

विदेशी हुकुमत की दृष्टि में देशभक्ति राष्ट्रद्रोह था। लेकिन मालवीय जी के रोम-रोम में देशभक्ति समायी हुई थी। उनका जीवन प्रतिक्षण राष्ट्र के लिए समर्पित था। गांधी जी उन्हें सबसे बड़ा देशभक्त मानते थे। एक बार कहा भी कि 'मैं मालवीय जी की देशभक्ति की पूजा करता हूं।' मालवीय जी के विशाल हृदय में समाज के सभी वर्गों के लिए सम्मान और प्रेम था। वे जाति-पांति और छुआछूत के धुर विरोधी थे। उन्होंने दलित नेता पीएन राजभोज के साथ सैकड़ों दलितों का मंदिर में प्रवेश कराया। 1932-33 में काशी में भीषण सांप्रदायिक दंगा हुआ। लोगों का घर से निकलना बंद हो गया। लोग भूख से तड़पने लगे। उनको सहायता पहुंचाने के लिए हिंदुओं और मुसलमानों की अलग-अलग कमेटियां बनी। मालवीय जी हिंदुओं की कमेटियों के अध्यक्ष थे। उनके नेतृत्व में अनाज इकठ्ठा किया गया। तभी उन्हें जानकारी मिली कि मुसलमान मोहल्लों में मुसलमान भूख से बेहाल हैं। मालवीय जी इकठ्ठा किया गया संपूर्ण अनाज मुसलमानों के घरों में भिजवा दिया। मालवीय जी सिद्धांत के बड़े पक्के थे। उनका आचरण उच्चकोटि का था। उन्होंने 'हिन्दुस्थान' का संपादन अपने हाथ में लिया तो उसके संचालक, जो मद्यपान के अभ्यस्त थे, से तय कर लिया था कि वे मद्यपान कर उन्हें कभी नहीं बुलाएंगे। एक दिन संचालक ने यह गलती कर बैठी। मालवीय जी तत्क्षण ही संपादक पद से इस्तीफा दे दिया। मालवीय जी स्वयं में पत्रकारिता के आदर्श मानदंड थे। उन्होंने 1907 में साप्ताहिक 'अभ्युदय' और 1909 में दैनिक 'लीडर' अखबार निकालकर लोगों में राष्ट्रीय भावना का संचार किया। राजनीति के स्तर को भी उन्होंने ऊंचा उठाया। एक बार उनसे किसी ने कहा 'राजनीति में अपनी उन्नति और दूसरे का विनाश अभिष्ट है।' मालवीय जी ने उत्तर दिया 'ऐसी राजनीति सच्ची राजनीति नहीं हो सकती। सच्ची राजनीति का उद्देश्य अपने साथ दूसरों की उन्नति के लिए प्रयत्न करना है।' मालवीय जी इसी आदर्श पर जीवन भर चलते रहे। उनका संपूर्ण राजनीतिक जीवन मर्यादापूर्ण रहा। वे 24 साल की उम्र में कांग्रेस से जुड़ गए। 1901 में इलाहाबाद नगर निगम के उपाध्यक्ष चुने गए और दो वर्ष बाद प्रांतीय विधानसभा के सदस्य बने। असहयोग आंदोलन के आरंभ तक नरम दल के नेताओं के कांग्रेस छोड़ देने पर भी वे उसमें डटे रहे। कांग्रेस ने उन्हें चार बार सभापति निर्वाचित कर सम्मानित किया। मालवीय जी अपनी योग्यता के बल पर वायसराय की कौंसिल, इंपीरियल लेजिस्लेटिव कौंसिल और सेंट्रल लेजिस्लेटिव असेंबली के भी सदस्य बने। उनमें निडरता, उदारता और सर्जनात्मक जिद्द कूट-कूटकर भरी थी। वे 1913 में हरिद्वार में गंगा पर बांध बनाने की अंग्रेजी योजना का तब तक विरोध किया जब तक कि शासन ने उन्हें भरोसा नहीं दिया कि गंगा को हिंदुओं की अनुमति के बिना बांधा नहीं जाएगा।